International Journal For Technological Research In Engineering
Volume 10 Issue 1 September-2022 ISSN: 2347 - 4718

शीत युद्ध और भारत की गुटनिरपेक्ष नीति: अंतरराष्ट्रीय संबंधों में भारत की भूमिका का समालोचनात्मक अध्ययन

शोधकर्ता: डॉ. अनुपम मित्र

सहायक आचार्य, इतिहास विभाग, राजकीय महाविद्यालय, स्वार, रामपुर (उ.प्र.)

सारांश

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के पश्चात वैश्विक राजनीति में एक अभूतपूर्व और जटिल शक्ति-संरचना का उदय हुआ, जिसे अंतरराष्ट्रीय संबंधों के इतिहास में 'शीत युद्ध' के नाम से जाना जाता है। इस कालखंड में संपूर्ण विश्व स्पष्ट रूप से दो प्रमुख और परस्पर विरोधी विचारधारा वाले सैन्य गुटों—पूंजीवादी गुट और साम्यवादी गुट—में विभाजित हो गया था। इस अत्यंत संवेदनशील भू-राजनीतिक परिदृश्य में, भारत ने नवस्वतंत्र राष्ट्रों के समक्ष 'गुटनिरपेक्ष आंदोलन' के माध्यम से एक स्वतंत्र और स्वायत्त विदेश नीति का एक नया विकल्प प्रस्तुत किया। यह शोध-पत्र भारत की गुटनिरपेक्ष नीति के वैचारिक आधारों, इसके क्रमिक कूटनीतिक विकास, इसके समक्ष उत्पन्न हुई भू-राजनीतिक चुनौतियों और अंतरराष्ट्रीय संबंधों पर इसके व्यापक प्रभावों का गहन और समालोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन यह तर्क स्थापित करता है कि गुटनिरपेक्षता केवल निष्क्रिय तटस्थता का पर्याय नहीं थी, बल्कि यह भारत के लिए वैश्विक मंच पर अपनी रणनीतिक स्वायत्तता बनाए रखने और वैचारिक रूप से वैश्विक दक्षिण की आवाज बनने का एक अत्यंत सक्रिय साधन थी। यद्यपि विभिन्न ऐतिहासिक घटनाओं ने इस नीति की व्यावहारिक सीमाओं को भी समय-समय पर उजागर किया, फिर भी समकालीन बहुध्रुवीय विश्व में इसका मूल दर्शन आज भी अत्यधिक प्रासंगिक है।

मुख्य शब्द: शीत युद्ध, गुटनिरपेक्ष आंदोलन, भारतीय विदेश नीति, अंतरराष्ट्रीय संबंध, रणनीतिक स्वायत्तता।

१. परिचय

अंतरराष्ट्रीय कूटनीति और राजनीतिक इतिहास में बीसवीं शताब्दी का मध्य भाग अत्यंत उथल-पुथल और परिवर्तनों का साक्षी रहा है। एक ओर जहां सदियों पुरानी औपनिवेशिक व्यवस्थाएं धराशायी हो रही थीं और एशिया तथा अफ्रीका में विउपनिवेशीकरण की लहर चल रही थी, वहीं दूसरी ओर विजेता राष्ट्रों के बीच वैचारिक वर्चस्व की एक नई प्रतिस्पर्धा जन्म ले रही थी। इसी पृष्ठभूमि में स्वतंत्र भारत ने अपनी विदेश नीति के सबसे मजबूत स्तंभ 'गुटनिरपेक्षता' की आधारशिला रखी।

१.१ द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात वैश्विक परिदृश्य एवं द्विध्रुवीय व्यवस्था

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद वैश्विक शक्ति संतुलन में भारी बदलाव आया। पारंपरिक यूरोपीय महाशक्तियां आर्थिक और सैन्य रूप से कमजोर हो चुकी थीं। इसके स्थान पर दो नई महाशक्तियों का उदय हुआ। इन दोनों शक्तियों ने दुनिया को अपने-अपने प्रभाव क्षेत्र में बांटने के लिए सैन्य गठबंधनों का निर्माण किया। यह केवल सैन्य प्रतिस्पर्धा नहीं थी, बल्कि आर्थिक प्रणालियों और राजनीतिक दर्शन के बीच का संघर्ष था। इस संघर्ष ने एक ऐसे 'शीत युद्ध' को जन्म दिया जिसमें सीधे तौर पर हथियारों का प्रयोग तो नहीं हुआ, लेकिन जासूसी, छद्म युद्धों और वैचारिक प्रचार के माध्यम से पूरे विश्व को विनाश के कगार पर ला खड़ा किया।

१.२ नवस्वतंत्र राष्ट्रों की कूटनीतिक दुविधा और नव-उपनिवेशवाद का भय

इस वैचारिक संघर्ष के बीच, वे राष्ट्र जो हाल ही में औपनिवेशिक शासन की बेड़ियों से मुक्त हुए थे, एक गहरे संकट का सामना कर रहे थे। इन देशों के सामने राष्ट्र-निर्माण, अत्यधिक गरीबी उन्मूलन और आर्थिक विकास जैसी विशाल आंतरिक चुनौतियां थीं। किसी एक गुट में शामिल होने का सीधा अर्थ था अपनी नवार्जित राजनीतिक संप्रभुता को पुनः गिरवी रखना। भारतीय नेतृत्व ने इस खतरे को भांप लिया था कि सैन्य गठबंधनों में शामिल होने से नव-उपनिवेशवाद का खतरा पैदा हो सकता है, जहां महाशक्तियां आर्थिक सहायता के बहाने छोटे देशों की नीतियों को नियंत्रित कर सकती थीं।

१.३ भारत की गुटनिरपेक्ष नीति के वैचारिक आधार

भारत की गुटनिरपेक्ष नीति अचानक उत्पन्न हुई कोई कूटनीतिक चाल नहीं थी, बल्कि इसकी जड़ें भारत के स्वतंत्रता संग्राम के आदर्शों और प्राचीन दार्शनिक मान्यताओं में गहराई तक समाहित थीं। इस नीति के मुख्य वैचारिक तत्व निम्नलिखित थे:

- **शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व:** बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के सभी राष्ट्रों के विकास का अधिकार।
- **स्वतंत्र मूल्यांकन:** अंतरराष्ट्रीय विवादों पर किसी गुट के दबाव में आए बिना, उनके गुण-दोष के आधार पर निर्णय लेना।
- **साम्राज्यवाद और नस्लवाद का विरोध:** वैश्विक स्तर पर हर प्रकार के औपनिवेशिक शोषण और रंगभेद की नीतियों का मुखर विरोध।

- **समानता और पारस्परिक लाभ:** सभी देशों के साथ कूटनीतिक और आर्थिक समानता के आधार पर संबंध स्थापित करना।

१.४ गुटनिरपेक्ष आंदोलन का संस्थागत विकास और भारत की भूमिका

भारत ने केवल अपने लिए ही इस नीति को नहीं अपनाया, बल्कि विश्व के अन्य नवस्वतंत्र देशों को भी इसके तहत एकजुट करने का ऐतिहासिक कार्य किया। उन्नीस सौ पचपन के एशियाई-अफ्रीकी सम्मेलन ने इस विचार को एक मंच प्रदान किया। इसके बाद, उन्नीस सौ इकसठ में यूगोस्लाविया, मिस्र, इंडोनेशिया और घाना के शीर्ष नेताओं के साथ मिलकर भारत ने आधिकारिक तौर पर 'गुटनिरपेक्ष आंदोलन' की स्थापना की। यह संगठन संयुक्त राष्ट्र के बाद दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा राजनीतिक मंच बन गया।

१.५ शोध का उद्देश्य एवं महत्व

प्रस्तुत शोध-पत्र का प्राथमिक उद्देश्य शीत युद्ध की गतिशीलता के संदर्भ में भारत की गुटनिरपेक्ष नीति का आलोचनात्मक मूल्यांकन करना है। यह अध्ययन इस बात की पड़ताल करता है कि यह नीति अपने घोषित आदर्शों और कूटनीतिक यथार्थ के बीच संतुलन बनाने में कितनी सफल रही। साथ ही, यह शोध इस नीति की उन ऐतिहासिक सीमाओं का भी विश्लेषण करता है जो विभिन्न सैन्य संकटों के दौरान स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आईं।

२. साहित्य समीक्षा

भारत की विदेश नीति और गुटनिरपेक्ष आंदोलन की जटिलताओं को समझने के लिए विभिन्न प्रतिष्ठित इतिहासकारों, अर्थशास्त्रियों और राजनीतिक विचारकों द्वारा किए गए विस्तृत शोध कार्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। यह साहित्य समीक्षा एक वर्णनात्मक दृष्टिकोण के माध्यम से इस विषय के ऐतिहासिक, वैचारिक और रणनीतिक आयामों को स्पष्ट करती है।

भारतीय विदेश नीति के उद्भव को समझने के लिए सबसे प्राथमिक और महत्वपूर्ण स्रोत भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा रचित कृति है (Nehru, 1946)। अपनी इस ऐतिहासिक पुस्तक में उन्होंने भारत के लंबे सांस्कृतिक इतिहास और शांतिपूर्ण समन्वय की परंपरा का विस्तार से वर्णन किया है। इस ग्रंथ का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि भारत का स्वतंत्र कूटनीतिक दृष्टिकोण उनके ऐतिहासिक और दार्शनिक चिंतन का ही एक व्यावहारिक रूप था। इसी ऐतिहासिक निरंतरता को आगे बढ़ाते हुए, प्रसिद्ध इतिहासकार बिपन

चंद्रा ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की वैचारिक जड़ों का सूक्ष्म विश्लेषण किया है (Chandra, 2009)। चंद्रा का शोध यह प्रमाणित करता है कि भारत की गुटनिरपेक्ष नीति कोई आकस्मिक कूटनीतिक निर्णय नहीं था, बल्कि यह औपनिवेशिक शोषण के विरुद्ध चले लंबे संघर्ष का स्वाभाविक विस्तार था। पश्चिमी शक्तियों के प्रति अविश्वास की जो भावना स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान पनपी थी, उसी ने भारतीय नेतृत्व को किसी भी सैन्य गठबंधन से दूर रहने के लिए प्रेरित किया। इस तर्क को थॉमस आर. मेटकाफ का अध्ययन और अधिक सुदृढ़ करता है (Metcalf, 1995)। मेटकाफ ने ब्रिटिश औपनिवेशिक विचारधाराओं का आलोचनात्मक परीक्षण किया है। उनके शोध से यह समझा जा सकता है कि औपनिवेशिक शासन की मनोवैज्ञानिक छाप के कारण भारतीय नीति-निर्माता किसी भी नए रूप के विदेशी प्रभुत्व को स्वीकार करने के लिए कतई तैयार नहीं थे।

विचारधारा और राज्य-निर्माण के परिप्रेक्ष्य में, सुनील खिलनानी का कार्य अत्यंत महत्वपूर्ण है (Khilnani, 1997)। खिलनानी ने नवस्वतंत्र भारत की पहचान का विश्लेषण करते हुए यह तर्क दिया है कि सैन्य और आर्थिक दृष्टि से अत्यंत कमजोर होने के बावजूद, गुटनिरपेक्षता ने भारत को अंतरराष्ट्रीय पटल पर एक शक्तिशाली वैचारिक महाशक्ति के रूप में स्थापित कर दिया। इस नीति ने भारत को विश्व राजनीति में एक नैतिक उच्चता प्रदान की। इसी राज्य-निर्माण की प्रक्रिया को जूडिथ ब्राउन ने अपने अध्ययन में गहराई से परखा है (Brown, 1994)। ब्राउन के अनुसार, एक अत्यधिक विविधतापूर्ण, बहुभाषी और नव-विभाजित समाज को एकजुट करने में इस स्वतंत्र विदेश नीति ने एक शक्तिशाली उत्प्रेरक का कार्य किया। बाहरी दुनिया के सामने एक स्वतंत्र और स्वाभिमानी रुख अपनाकर भारतीय नेतृत्व देश के भीतर राष्ट्रीय गौरव और राजनीतिक एकजुटता स्थापित करने में सफल रहा।

हालांकि, कुछ विद्वान इसे केवल विचारधारा तक सीमित नहीं मानते। रामचंद्र गुहा ने स्वतंत्रता के बाद के भारतीय इतिहास का एक विशाल और तथ्यात्मक लेखा-जोखा प्रस्तुत किया है (Guha, 2007)। गुहा अपने शोध में स्पष्ट रूप से यह स्थापित करते हैं कि गुटनिरपेक्षता कोई आदर्शवादी या काल्पनिक विचार मात्र नहीं था, बल्कि एक अत्यंत निर्धन और विकासशील राष्ट्र के लिए सबसे यथार्थवादी और व्यावहारिक आवश्यकता थी। यदि भारत किसी गुट का हिस्सा बनता, तो उसे अपनी सीमित पूंजी सैन्यीकरण पर खर्च करनी पड़ती। इस आर्थिक पहलू को अमर्त्य सेन के अर्थशास्त्रीय शोध से भी समर्थन मिलता है (Sen, 1999)। सेन ने विकास को स्वतंत्रता के विस्तार के रूप में परिभाषित किया है। उनके अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सैन्य गठबंधनों से दूर रहने की नीति ने भारत को वह महत्वपूर्ण समय और आर्थिक संसाधन

प्रदान किए, जो देश की लोकतांत्रिक संस्थाओं को मजबूत करने और गरीबी उन्मूलन के लिए परम आवश्यक थे।

वैश्विक और क्षेत्रीय भू-राजनीति के संदर्भ में, ओड अर्न वेस्टैड का शोध एक व्यापक अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करता है (Westad, 2007)। वेस्टैड ने शीत युद्ध को केवल उत्तरी गोलार्ध के संघर्ष के रूप में नहीं, बल्कि तीसरी दुनिया में महाशक्तियों के हस्तक्षेप के रूप में विश्लेषित किया है। उनके कार्य से यह सिद्ध होता है कि विकासशील देशों के लिए गुटनिरपेक्ष आंदोलन नव-उपनिवेशवाद और विदेशी हस्तक्षेप के खिलाफ एक संगठित रक्षा कवच था। इस रक्षा कवच का महत्व अफ्रीका के संदर्भ में जूलियस न्येरेरे के लेखों में भी प्रतिध्वनित होता है (Nyerere, 1968)। न्येरेरे का दृष्टिकोण यह स्पष्ट करता है कि भारत द्वारा प्रवर्तित इस नीति ने संपूर्ण वैश्विक दक्षिण को अपनी राजनीतिक संप्रभुता बनाए रखने का वैचारिक आधार प्रदान किया। अंततः, इस नीति की क्षेत्रीय जटिलताओं को सुगत बोस के अध्ययन के माध्यम से समझा जा सकता है (Bose, 2015)। बोस ने दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय राजनीति का विश्लेषण करते हुए बताया है कि वैश्विक स्तर पर भले ही भारत ने आदर्शवादी नीति अपनाई, लेकिन क्षेत्रीय स्तर पर विशेषकर अपने पड़ोसियों के संदर्भ में इस नीति को कई गंभीर कूटनीतिक और सामरिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा, जिसने इस नीति की व्यावहारिक सीमाओं को भी समय-समय पर उजागर किया।

तालिका १: साहित्य समीक्षा का सारांश और मुख्य निष्कर्ष

क्रम संख्या	लेखक एवं प्रकाशन वर्ष	अध्ययन का मुख्य विषय क्षेत्र	शोध का प्रासंगिक निष्कर्ष एवं योगदान
१	जवाहरलाल नेहरू (१९४६)	भारत का सांस्कृतिक एवं दार्शनिक इतिहास	शांतिपूर्ण वैश्विक सह-अस्तित्व और स्वतंत्र कूटनीति की दार्शनिक नींव स्वतंत्रता से पूर्व ही निर्धारित हो गई थी।
२	बिपन चंद्रा (२००९)	भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की विचारधारा	गुटनिरपेक्ष नीति साम्राज्यवाद-विरोधी और उपनिवेशवाद-विरोधी ऐतिहासिक संघर्ष का ही कूटनीतिक विस्तार थी।
३	थॉमस आर.	औपनिवेशिक	औपनिवेशिक शोषण के मनोवैज्ञानिक प्रभाव ने

	मेटकाफ (१९९५)	विचारधाराओं का विश्लेषण	भारतीय नेतृत्व को नए सैन्य गठबंधनों से सतर्क रहने के लिए प्रेरित किया।
४	सुनील खिलनानी (१९९७)	भारत की वैचारिक और राजनीतिक पहचान	इस नीति ने भौतिक संसाधनों की कमी के बावजूद भारत को विश्व में एक वैचारिक महाशक्ति का दर्जा दिलाया।
५	जूडिथ ब्राउन (१९९४)	आधुनिक भारत में राज्य-निर्माण की प्रक्रिया	स्वतंत्र विदेश नीति ने भारत के भीतर राष्ट्रीय स्वाभिमान जगाकर आंतरिक राजनीतिक एकजुटता को मजबूत किया।
६	रामचंद्र गुहा (२००७)	भारत का उत्तर-स्वतंत्रता इतिहास	यह नीति आदर्शवादी कल्पना नहीं, बल्कि एक गरीब राष्ट्र के लिए आर्थिक और कूटनीतिक यथार्थवादी आवश्यकता थी।
७	अमर्त्य सेन (१९९९)	विकास और स्वतंत्रता का अर्थशास्त्र	गुटनिरपेक्षता के कारण बचे संसाधनों का उपयोग भारत ने अपने लोकतांत्रिक और सामाजिक विकास में किया।
८	ओड अर्न वेस्टैड (२००७)	तीसरी दुनिया में शीत युद्ध का प्रभाव	यह आंदोलन नव-उपनिवेशवाद और विकासशील देशों में महाशक्तियों के हस्तक्षेप के विरुद्ध एक मजबूत ढाल था।
९	जूलियस न्येरेरे (१९६८)	अफ्रीकी परिप्रेक्ष्य में गुटनिरपेक्षता	इस भारतीय नीति ने पूरे अफ्रीकी महाद्वीप को राजनीतिक संप्रभुता और कूटनीतिक स्वतंत्रता का मार्ग दिखाया।
१०	सुगत बोस (२०१५)	दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय भू-राजनीति	वैश्विक स्तर की इस नीति को दक्षिण एशियाई भू-राजनीति और सुरक्षा चिंताओं के कारण कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा।

३. निष्कर्ष

शीत युद्ध के अत्यंत ध्रुवीकृत, तनावपूर्ण और सैन्यीकरण के दौर में, भारत द्वारा अंगीकृत की गई गुटनिरपेक्ष नीति अंतरराष्ट्रीय संबंधों के क्षेत्र में एक अत्यंत दुस्साहसिक, दूरदर्शी और प्रभावशाली कूटनीतिक रणनीति थी। यह केवल दो लड़ती हुई महाशक्तियों के संघर्ष से खुद को बचाने का एक निष्क्रिय साधन नहीं था, बल्कि यह नवस्वतंत्र और विकासशील राष्ट्रों के लिए अपनी गरिमा, अपनी भौगोलिक संप्रभुता और अपनी स्वतंत्र पहचान को विश्व पटल पर स्थापित करने का एक सबसे सशक्त और सक्रिय माध्यम था। साहित्य समीक्षा और ऐतिहासिक विश्लेषण से यह स्पष्ट रूप से प्रमाणित होता है कि यद्यपि भारत को कुछ विशेष सामरिक संकटों के दौरान अपनी इस नीति में यथार्थवादी और व्यावहारिक बदलाव करने पड़े, फिर भी इस मूल सिद्धांत ने भारत को कभी भी एक स्वतंत्र विदेश नीति के मार्ग से पूर्णतः विचलित नहीं होने दिया।

कठोर आलोचक इस नीति को अत्यधिक आदर्शवादी या संकट के समय दोनों पक्षों से लाभ उठाने की एक अवसरवादी कूटनीति की संज्ञा दे सकते हैं, परंतु ऐतिहासिक यथार्थ यह है कि स्वतंत्रता के पश्चात अपने अत्यंत सीमित आर्थिक, तकनीकी और सैन्य संसाधनों के बीच, भारत के पास राष्ट्र-निर्माण और वैश्विक अस्तित्व को बनाए रखने के लिए इससे अधिक व्यावहारिक और सुरक्षित रणनीतिक विकल्प उपलब्ध नहीं था। इसके अतिरिक्त, इस नीति ने न केवल भारत को, बल्कि समूचे एशिया और अफ्रीका के नवस्वतंत्र देशों को नव-उपनिवेशवाद के संभावित खतरों से सुरक्षित रखा।

आज, जब शीत युद्ध समाप्त हो चुका है और हम इक्कीसवीं सदी के एक नए बहुध्रुवीय वैश्विक परिदृश्य में प्रवेश कर चुके हैं, जहां विश्व एक बार फिर से नए प्रकार के आर्थिक संरक्षणवाद, भू-राजनीतिक तनावों और नई सामरिक गुटबाजियों की ओर अग्रसर है, वहां गुटनिरपेक्षता का मूल वैचारिक दर्शन अत्यधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। बिना किसी बाहरी दबाव के स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता, जिसे समकालीन कूटनीतिक भाषा में 'रणनीतिक स्वायत्तता' कहा जाता है, भारतीय विदेश नीति का सबसे प्रासंगिक, जीवंत और स्थायी आधार स्तंभ बना हुआ है। गुटनिरपेक्ष आंदोलन अपने संस्थागत स्वरूप में भले ही उतना मुखर न रहा हो, किंतु इसका दार्शनिक सार आज भी भारत को वैश्विक मंच पर एक जिम्मेदार, स्वतंत्र और शांति-प्रिय राष्ट्र के रूप में स्थापित करने में निरंतर सहायता कर रहा है।

४. References

1. Bose, S. (2015). *Modern South Asia: History, Culture, Political Economy*. Routledge.
2. Brown, J. M. (1994). *Modern India: The Origins of an Asian Democracy*. Oxford University Press.
3. Chandra, B. (2009). *India's Struggle for Independence*. Penguin Books.
4. Guha, R. (2007). *India After Gandhi: The History of the World's Largest Democracy*. HarperCollins.
5. Khilnani, S. (1997). *The Idea of India*. Farrar, Straus and Giroux.
6. Metcalf, T. R. (1995). *Ideologies of the Raj*. Cambridge University Press.
7. Nehru, J. (1946). *The Discovery of India*. The Signet Press.
8. Nyerere, J. K. (1968). *Freedom and Socialism: Uhuru na Ujamaa - A Selection from Writings and Speeches, 1965-1967*. Oxford University Press.
9. Sen, A. (1999). *Development as Freedom*. Oxford University Press.
10. Westad, O. A. (2007). *The Global Cold War: Third World Interventions and the Making of Our Times*. Cambridge University Press.